Samvid Multidisciplinary Research Journal
Where researchers meet their destiny...
ISSN 2582-015X

स्वाधिनतासंग्राम ओर लोकमान्य तिलक

डॉ॰ संगीता बकोतरा[1]*

ऐतिहासिक चितपावन कुल, जिसनेबाळाजीविश्वनाथ तथाबाजीराव पेशवा-जैसे राष्ट्रभक्त एवं रणबांकुरों को राष्ट्रहित के लिए अर्पित किया, उसी कीकड़ी केरूप मेंप्रखरराष्ट्रवादी, वेदवेत्ता, देशभक्त, राष्ट्रनिर्माता, महान् गणितज्ञ, भगवद्गीता के भाष्य-प्रणेता तिळक को विदेशी दासता से मुक्ति की आधारपीठिकाऔर भारतीयों के हृदय में राष्ट्रवादी भावना जागृत करने हेतु समर्पित किया।अंग्रेज़ी साम्राज्यवाद, पूँजीवाद, सैन्यवाद की संगठित शक्ति के विरोध में भारतीय राष्ट्रवाद एवं स्वराज्य का नारा बुलन्द कर चालीस वर्ष तक अखण्ड रूप में उसके लिएअथकप्रयत्न करते रहना, घोर कष्ट सहते रहना एवं प्रबल राष्ट्रीय भावना उत्पन्न कर स्वराज्य की आधार-पीठिका मज़बूत करने के लिए सर्वस्व का हवन करस्वराज्य के यज्ञको समृद्ध करना लोकमान्य तिळक ऐसे कर्मयोगी के जीवन कालक्ष्य हो गया।[1]उन्होंने इस यज्ञ को समृद्ध कर, वैदिक सन्देश'**यज्ञेन यज्ञमयजन्तदेवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन**'को पुष्ट किया ।

विदेशी दासता के उस कालखण्ड में आंतरिक एवं त्रस्त भारतीयों के बीचराष्ट्रवादीभावना को जाग्रत करने के लिए लोकमान्य ने यह स्वीकार किया किप्राचीन भारतीय संस्कृति के कल्याणकारी और जीवनदायिनी परम्पराओं का उत्कर्षएवं पुनर्स्थापना आवश्यक है। तिळक ने स्पष्ट किया, 'सच्चा राष्ट्रवादी पुरानी नींवपर ही निर्माण करना चाहता है। जो सुधार पुरातन के प्रति घोर असम्मान की भावनापर आधारित है, उसे सच्चा राष्ट्रवादी रचनात्मक कार्य नहीं समझता। हम अपनीसंस्थाओं को अंग्रेजियत के ढाँचे में नहीं ढालना चाहते, सामाजिक तथा राजनीतिकसुधार के नाम पर हम उनका अराष्ट्रीयकरण नहीं करना चाहते हैं।[2]

अर्थात् राष्ट्र एवं राष्ट्रवाद कीयहभावना अतीत से भारत में संरोपित, पुष्पित एवं पल्लवित है। वेदों में वर्णित 'राष्ट्र' शब्दतथा उसकी संस्कृति के प्रतिलगाव उसे नष्ट करनेवाले के विरोध के लिए सर्वस्व का न्योछावर करने की उत्कण्ठाएवंउत्सर्ग कीभावनाएक सच्चे राष्ट्रवादीकेमन में वर्तमानएवं दासताकेकालखण्ड में वर्तमान रहती है। वे राष्ट्र में आध्यात्मिक

[1]***आस्टिटन्ट प्रोफेसर, पि.के. कोटावाला आर्ट्स कोलेज, पाटण (उतर गुजरात)***

Samvid Multidisciplinary Research Journal
Where researchers meet their destiny...
ISSN 2582-015X

शक्ति और नैतिक उत्साहउत्पन्न करने के लिए वेदों तथा गीता के सन्देश को जनता के समक्ष रखना चाहते थे।

वास्तव में राष्ट्रवाद तत्त्वतः एक मानसिक और अध्यात्मिक प्रत्यय है। यहउस पुरानी गणभक्ति की गम्भीर भावनाओं का आधुनिक संस्करण है जोहमप्रागैतिहासिक और प्राचीन युगों से देखते आये हैं। लोगों में प्रेम और अनुराग की जोभावना भारत में अपने गण तथा अन्य देशों में कबीले, पोलिस, सिविटास और देश के प्रति थी, उसी ने वर्तमान युग में विकसित होकर राष्ट्रभक्ति का रूप धारण करलिया है। तिळक ने यह स्वीकार किया है कि राष्ट्रवाद तभी पनपता है जब एकताकी भावना को उत्पन्न करनेवाले वस्तुगत तत्त्व विद्यमान होते हैं। यथा सर्वमान्य द्वाराबोली जानेवाली एक भाषा, किसी एक ही वास्तविक अथवा काल्पनिक व्यक्ति याजाति से सब की उत्पत्ति का विश्वास, एक ही भूमि पर निवास और एक सामान्यधर्म- ये कुछ बहुत ही महत्त्वपूर्ण वस्तुगत तत्त्व हैं जिनसे राष्ट्रवाद की भावना उत्पन्न होती है। वास्तव में राष्ट्रवाद के विकास एवं स्थायित्व के लिए तिळक ने ऐतिहासिकपरम्पराओं की विरासत पर आधारित मानसिक एकता की भावना का विद्यमान होनाआवश्यक स्वीकार किया है।[3] भारत में जातिगत औरभाषागतविभिन्नताओं केबावजूद राष्ट्रवाद का यह मानसिक आधार अतीत से वर्तमान तक महत्त्वपूर्ण रहा है।भारतीय संस्कृति की सरिता के सतत और अविच्छिन्न आध्यात्मिक ऐक्य भाव सेविभिन्नता में एकता तथा राष्ट्रवाद की दृढ़ भावना को तिरोहितनहीं होने दिया।दासता के कालखण्ड में यह सुसुप्त भले ही हो गया। वास्तव में राष्ट्र एक सांस्कृतिकइकाई है तथा राष्ट्रवाद सांस्कृतिक आत्मा जो भारत में उत्तर से दक्षिण एवं पूरबपश्चिममोक्ष, निर्वाण, कैवल्य तथा तर्पण, समर्पण आदि विशिष्टआयामों, रीतियोंएवं प्राप्य के बन्धनों से युक्त है। अंग्रेज़ों की परतन्त्रता के कालखण्ड में भारत मेंतिळक, विवेकानन्द, बंकिमचन्द्र, श्री अरविन्द, विपिन चन्द्र पाल और महात्मा गाँधीने राष्ट्रवाद के उस आध्यात्मिक तत्त्व को महत्त्व दिया।[4]

इसी प्रकार उत्सव और समारोह को राष्ट्रवाद के प्रतीकात्मक तत्त्व के रूपमें लोकमान्य द्वारा स्वीकार किया गया। एक ओर इनसे सम्मिलित होनेवाले लोगों मेंव्याप्त एकता के बन्धनों को व्यक्त करते हैं और दूसरी ओर उनसे एकता की भावनाओं को बल औरऊर्जामिलती है। लोकमान्य ने इन भावनाओं कोसृजनात्मक शक्तियों के रूप में वाञ्छित कार्यों में नियोजित कर राष्ट्रवादी ध्येय कोऊर्जा प्रदान की ।

Samvid Multidisciplinary Research Journal
Where researchers meet their destiny...
ISSN 2582-015X

इसी प्रकार ध्वज, राष्ट्रचिह्न प्रतीकात्मक प्रयोग सांस्कृतिक विकास काद्योतक है; क्योंकि इससे प्रकट होता है कि मनुष्य कोरे भौतिक जीवन से ऊपर उठ है और राष्ट्र-जैसी किसी अतिवैयक्तिक सत्ता का आनन्द और आह्लाद का अनुभव कर सकता है। कुछ प्रतीक सुसंस्कृत और सौन्दर्यप्रिय लोगों को पसन्द नहीं. लग सकते किन्तु सर्वाधिक महत्त्व इस बात का है कि उनमें सर्वमान्य को प्रभावित करने की शक्ति कितनी है। राष्ट्रवाद के इस अनिवार्य तत्त्व को पहचानकर महाराष्ट्रके लोकप्रिय परम्परा गणपति पूजा और शिवाजी-उत्सव को पुनः नवरूप प्रदान करनेका प्रयोग किया।

गणपति और शिवाजी-उत्सव महाराष्ट्र के उदीयमान भावनात्मक राष्ट्रवाद के प्रतीक थे। गणपति उत्सव प्राचीन काल से चला आ रहा था। तिळक के प्रयोग केपूर्वमहाराष्ट्र के राजा, प्रमुख और सरदार इस उत्सव के लिए दान दिया करते थे ।तिळक और उनके साथियों ने प्रयोग के तौर पर व्यक्तिगत सार्वजनिक समारोह के इस प्रयास ने महाराष्ट्र के लोगों के मन में एकता का भाव उत्पन्न करने लगा तथाइसके द्वारा 'हम सब एक हैं', 'हमारे देव गणपति हैं'- की भावना उत्पन्न होने लगी।इस प्रयोग का प्रभाव यह हुआ कि राष्ट्रवाद के सफल होने का मार्ग प्रशस्त हुआ ।

सार्वजनिक ढंग से गणेशोत्सव का विचार भारतीय राज्यों में फैलनेलगाऔर 1896-'97 तक वह सम्पूर्ण महाराष्ट्र में मनाया जाने लगे। हिंदू-मुस्लिम दंगों नेस्पष्ट कर दिया था कि हिंदुओं की एकता की नींवको सुदृढ़करना नितान्तआवश्यक है। अतएव इस समय के नेताओं ने तय किया कि प्रयोगात्मक दृष्टि सेगणेशोत्सव एवं शिवाजी-उत्सव को सार्वजनिक रूप से मनाया जाय ।

गणपतिउत्सव की तरह शिवाजी-उत्सव के संबंध में 21 अप्रैल, 1896 की केसरी में लोकमान्य तिलक के एक भाषण की रिपोर्ट छापी। इस व्याख्यान में तिळकने स्पष्ट रूप सेकहाकि शिवाजी-उत्सव में किसी प्रकार की राजद्रोहात्मक भावनानहीं है। उन्होंने यह भी बतलाया कि शिवाजी-उत्सव मनाना प्रत्येक हिंदू का कर्तव्यहै।[6]उन्होंनेराष्ट्रीयउत्सवों पर पुनः लेख लिखा उसमें उन्होंने ओलम्पिया औरपिथियाके उत्सवों के ऐतिहासिक उदाहरणों का उल्लेख किया। उन्होंने स्वीकारकिया किराष्ट्रीयउत्सवों द्वाराअशिक्षितजनतातथाशिक्षित लोगों के बीच भाईचारों के सम्बन्ध स्थापित करने का अवसर प्राप्त होता है। सामूहिक समारोहों सेशिक्षित वर्गको नयी स्फूर्तिमिलती है। जनता में जागृति फैलती है तथा उनकादृष्टिकोण उदार होता है। लोकमान्य तिळक ने 9 अप्रैल, 1901 में केसरी में एक लेखलिखकर शिवाजी-

Samvid Multidisciplinary Research Journal
Where researchers meet their destiny...
ISSN 2582-015X

उत्सव के संबंध में एक विशिष्ट पहलू पर बल दिया। उन्होंने बतलाया कि काँग्रेस आन्दोलनकाउद्देश्य कुछ विशिष्ट अधिकारों को तत्काल प्राप्तकरना है, जबकि शिवाजी उत्सव एक स्फूर्तिदायक ओषधि की भाँति है जिससेसामाजिक तथा राजनीतिक जीवन की नींव एवं एकता सुदृढ़ होती है।[7] वास्तव में शिवाजी के मन में लोकसंग्रह की भावना थी, उन्होंने कभीस्थानीय स्वार्थों अथवासमाज के किसी वर्गविशेष के हितों की दृष्टि से नहीं विचार किया। यही कारण है कि मराठे शिवाजी के लिए सर्वस्वार्पित करने के लिए तैयार हो गये। जैसे लोकमान्यएवं राष्ट्र के लिए जिसका लखनऊ-अधिवेशन में स्टेशन से अधिवेशन-स्थल तकजाने में प्राप्त सम्मान से प्रमाणित होता है।

काँग्रेस का लखनऊ-अधिवेशन (1916) कई दृष्टियों से बड़ा महत्त्वपूर्णथा। राष्ट्रवादी 1907 के बाद पहली बार काँग्रेस-अधिवेशनमें शामिलहुएथे।तिळक को पूना सार्वजनिक सभा ने अपना प्रतिनिधि बनाकर इस अधिवेशन मेंभेजाथा। वह अपने समर्थकों के साथ एक स्पेशल ट्रेन से लखनऊ गए थे। इस ट्रेन कानाम रख दिया गया था 'होमरूल ट्रेन' ।[8]रास्ते में हर स्टेशन पर उनका बड़ा स्वागत हुआ। लखनऊ में उनका शाही स्वागत हुआ।

उनकी कार के टायर फाड़ दिए गए ताकि स्वागत समिति को बाध्य होकरउन्हें घोड़ागाड़ी में ले जाना पड़े।' घोड़ागाड़ी के घोड़े हटा दिए गए और लोगखुदगाड़ी कोखींचकर विशाल जुलूस के रूप में पण्डाल की ओर चल पड़े।[10]जब वहकाँग्रेस-पण्डाल में पहुँचे तो लोग उन्हें अपने कंधों पर बैठाकरमंचपर ले गए।[11]उनकी जय-जय के नारों से आकाश गूँजने लगा।[12]

वास्तव में तिळक के प्रयोगों का यहसुफलही था कि राष्ट्रहित के लिएलोगपूनाएवं महाराष्ट्र के विभिन्न स्थानों से अधिक संख्या में लखनऊ अधिवेशन मेंसम्मिलित हुए।इसका यह भी कारण है कि तिळक अत्याचार, उत्पीड़न तथा राष्ट्रपर दूसरे राष्ट्र की मूल्यों को बलात लादने के विरोधी थे। वे किसी वर्गविशेषयाजातिविशेषकेविरोध नहीं थे।यह बात सत्यहै कि व्यक्तिगत रूप सेतथासांस्कृतिक दृष्टिकोण से उन्हें हिंदू-धर्म तथा संस्कृति पर बड़ा गर्व था । राजनीतिक नेता होने के कारण वे हिंदुओं के उचित हितों की रक्षा करना चाहते थे । वे किसी प्रकार की कायता और समर्पण का अनुमोदन करने के लिए तैयार नहीं थे।[13]

प्रत्येक राष्ट्र अपनी विशिष्ट पद्धति को हीसत्यसमझने लगता है तथाअपने को एकमेव प्रतिभावन मानकर दूसरे राष्ट्रों पर अपनी पद्धतियों को लादने का प्रयत्न करना है।यदि यह प्रयत्नशान्तिमय होता तो भी बात नहीं किन्तु वह ज़बरदस्ती अपने सत्य को

Samvid Multidisciplinary Research Journal
Where researchers meet their destiny...
ISSN 2582-015X

दूसरे के गले उतारना चाहता है। मानव के सुख और वैभवको भी वह अपने राष्ट्र के सुख और वैभव तक ही सीमित करके दूसरे राष्ट्रों के सुख और शान्ति को नष्ट करता है, उसके प्राकृतिक विकास में बाधा डालता है। फलतःएक राष्ट्र दूसरे पर विजय प्राप्त कर लेता है, उसे गुलाम बना लेता है। परन्तु राष्ट्र काजीवन-प्रवाह रुद्ध हो जाता है।[14] ऐसी दशा में उस राष्ट्र के घटकों का प्रथम कर्तव्यहो जाता है कि विजेता राष्ट्र के प्रभुत्व को नष्ट करके स्वतंत्र किया जाए। उस राष्ट्रकी सम्पूर्णशक्ति विदेशी राष्ट्र के प्रति विद्रोह की भावना लेकर खड़ी हो जाती है। अपनी शक्ति और सामर्थ्य के अनुसार अवसर प्राप्त होने पर स्वतंत्रता को प्राप्त कर लेती है। राष्ट्र एक जीवमान इकाई है। वर्षों शताब्दियों के लम्बे कालखण्ड में इसका विकास होता है। किसी निश्चित भूभाग में निवास करनेवाला मानव समुदायजब उस भूमि के साथ तादात्म्य का अनुभव करने लगता है, जीवन के विशिष्ट गुणोंकोआचरित करता हुआ समान परम्परा और महत्त्वाकांक्षाओं से युक्तहोता है, सुख-दुःख की समान स्मृतियों और शत्रु-मित्र की समान अनुभूतियाँ प्राप्तकर परस्परहित संबंधों में ग्रथित होता है, संगठित होकर अपने श्रेष्ठ जीवन-मूल्यों कीस्थापनाके लिए सचेष्ट होता है और इस परम्परा कानिर्वाहकरनेवाले तथा उसेअधिकाधिक तेजस्वी बनाने के लिए महान् तप, त्याग, परिश्रम करनेवालेमहापुरुषोंकीश्रृंखला का निर्माण होता है तब पृथिवीके अन्य मानव-समुदायों से भिन्न एकसांस्कृतिक जीवन प्रकट होता है। इस भावनात्मक स्वरूप को ही राष्ट्र कहा जाता है। जब तक यह राष्ट्रीय अस्मिताबनीरहती है, राष्ट्रवाद भी जीवित रहता है।" जबतक यह राष्ट्रीय बनी रहती है राष्ट्र जीवित रहता है।[17]इसके क्षीण होने से राष्ट्रक्षीण होता है और नष्ट होने से राष्ट्र नष्ट हो जाता है ।[18]

लोकमान्यतिळक जिस प्रकार एक भावनात्मक तत्त्व के रूप में राष्ट्र काविकास एवंराष्ट्रवाद को स्वीकारकिया है, उसी प्रकार राष्ट्रवाद एवं राष्ट्र की अवधारणा दीनदयाल जी ने भी स्वीकार किया है। राष्ट्र एक जीवमान इकाईहै, राज्य मरणशील एवं परिवर्तनशील इकाई है। राज्य एवं राजा परिवर्तित होता है राष्ट्रएवं राष्ट्रवाद स्थायी रूप से रहता है।" इंग्लैण्ड का राज्य भारत पर स्थापित हो गयाथा। तिळक ने सुसुप्त राष्ट्र को जीवमान बनाने के लिए परम्पराओं एवं रीतियों कोपुनर्जागृतकिया राष्ट्र जाग्रत् हुआ राष्ट्रवाद की भावना प्रबल हुई। लोकमान्य नेघोषणा की : "Swaraj is my birth right and I shall have it."

राष्ट्रवाद के जागरण के पश्चात् 1947 में भारत को राजनीतिक स्वतंत्रताप्राप्त हुई, परन्तु हिंदुस्तान विखण्डित हो गया। जकारिया, पावेल प्राइस, शिरोल नेलोकमान्य को

Samvid Multidisciplinary Research Journal
Where researchers meet their destiny...
ISSN 2582-015X

मुस्लिमविरोधीबतायाहै। पर जिन्ना, मुख्तार अहमद अंसारी औरहसन इमाम ने तिळक की राष्ट्रवादी भावनाओं और समझौते की प्रवृत्ति की सराहनाकी है, क्योंकि उनकी बुद्धिमतापूर्ण सलाह और नरम नीति के कारण ही 1916 कालखनऊ समझौता संपादित हो सकता था। शौकत अली तथा हसरत मुहानी तिळक को अपना राजनीतिक गुरुमानते थे। शौकत अली ने लिखा, 'मैं पुनः सौवीं बार कहना चाहता हूँ कि मुहम्मद अली और मैं तिळक की पार्टी के थे और आज भीहैं ।[21]

हसरतमुहानीकाकथनहै, 'उसअल्पायु में ही मैंने तिळककोअपनाआदर्श नेता मान लिया था।....उन दिनोंमुझेभारत के लगभग सभी राजनीतिकनेताओं के विचारों तथा योग्यता का मूल्यांकन करने का पर्याप्त अवसर मिला था। उसी निजी तथासूक्ष्मजानकारी के आधार पर और बिना किसी प्रतिवाद के भय सेमैं कह सकता हूँ कि मैंने तिळक को हर दृष्टि से प्रत्येक अन्य नेता से श्रेष्ठ पाया। .....जब मैं यहघोषणाकर रहाहूँकितिळकके जीवनभर के बौद्धिकतथाव्यावहारिकदृष्टि से उनका अन्धानुयायी बना रहा तो इससे कोई भी उनके प्रति मेरेप्रेमका अनुमान लगा सकता है।[22]

राष्ट्रभक्त, जो राष्ट्र और राज्य की अवधारणा के साथ-साथराष्ट्रवाद कासही स्वरूप समझता है वह तिळक के राष्ट्रवाद की अवधारणा का सम्मान करता है।

सन्दर्भ :

1. डॉ॰ वी॰पी॰ वर्मा, आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन, आगरा, 2000, पृ॰230
2. लोकमान्य तिळक का 13 दिसम्बर, 1919 को मराठा में लिखा गया पत्र
3. डॉ॰ वी॰पी॰ वर्मा, पूर्वोक्त, पृ॰ 253
4. M.N. Roy, India in Transition, p. 188
5. डॉ॰ वी॰पी॰ वर्मा, पूर्वोक्त, पृ॰ 253
6. वही, पृ॰ 253
7. वही, पृ॰255
8. अयोध्यासिंह, भारत का मुक्ति-संग्राम, नयी दिल्ली, 1977, पृ॰ 291
9. वही, पृ. 292
10. वही, पृ॰292
11. वही, पृ॰292
12. वही, पृ॰292

13. डॉ॰ वी॰पी॰ वर्मा, पूर्वोक्त, पृ॰ 255
14. दीनदयाल उपाध्याय, राष्ट्र जीवन की दिशा, लखनऊ, 1992, पृ॰ 37
15. वही, पृ॰ 38
16. वही, पृ॰ 46 17. वही
18. वही
19. एच॰सी॰ई॰ जकारियास, रेनासेंट इण्डिया, लन्दन, 1955, पृ॰ 121
20. प्राइस पावेल, हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, पृ॰ 599
21. एस॰बी॰बापत (सं॰), रेमिनीसेंसेसऑफ़ तिलक, भाग 2, पृ॰576
22. वही, भाग 3, पृ॰36-3